IJRAR.ORG E-ISSN: 2348-1269, P-ISSN: 2349-5138
INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH AND ANALYTICAL REVIEWS (IJRAR) | IJRAR.ORG
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

जिला बिजनौर के ग्रामीण प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों के कार्यक्षेत्र में समायोजन की स्थिति का अध्ययन

माधव वर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर
नॉर्थ इंडिया कॉलेज ऑफ हायर एजुकेशन, नजीबाबाद

शोध सार: प्रस्तुत अनुसंधान प्रपत्र एक शिक्षक के ग्रामीण प्राथमिक विद्यालय में एक अध्यापक के रूप में चयनित होने के पश्चात उसकी समायोजन की स्थिति को प्रकट करता है। यह दर्शाता है, कि किस प्रकार शिक्षा एक शिक्षक का महत्वपूर्ण अवयव है। जिसके माध्यम से एक व्यक्ति के स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण किया जा सकता है। प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों के कार्यक्षेत्र में समायोजन की स्थिति का अध्ययन करने के लिए अनुसंधानकर्ता ने गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों प्रकार से आंकड़ों को एकत्रित किया है। जो इस अनुसंधान से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से संबंध रखते हैं। संपूर्ण प्रपत्र का विश्लेषण करने के पश्चात केवल यह कहा जा सकता है, कि शिक्षा मनुष्य का महत्वपूर्ण अंग है। जो एक व्यक्ति को सर्वोच्च ऊंचाई पर भी ले जा सकती है एवं उसके अभाव में मनुष्य निम्न स्तर पर भी रह सकता है। शिक्षक का समायोजन एवं कुसमायोजन बहुत कुछ उसके शिक्षा पर निर्भर करता है।

मूलशब्दः समायोजन, प्राथमिक, शिक्षक, शिक्षा, कुसमायोजन।

प्रस्तावना

संसार में ऐसे बहुत कम व्यक्ति हैं, जिन्हें शिक्षा में रूचि न हो। शिक्षक, अभिभावक, विद्यालय प्रबन्धक, शिक्षा मंत्री, राजनीतिज्ञ आदि सभी के मुख से यह शब्द प्रायः सुना जाता है। आजकल ही नहीं, वरन् अति प्राचीन काल से 'शिक्षा' शब्द का प्रयोग किसी–न–किसी अर्थ में होता चला आया है। इसकी पुष्टि में हम कुछ विद्वानों के विचारों को नीचे दे रहे हैं–

1. **प्लेटो (Plato)** – "शिक्षा से मेरा अभिप्राय उस प्रशिक्षण से है, जो अच्छी आदतों के द्वारा बच्चों में अच्छी नैतिकता का विकास करती है।
2. **अरस्तु (Aristotle)** – "शिक्षा–स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण करती है।
3. **काण्ट (Kant)** – "शिक्षा व्यक्ति की उस पूर्णता का विकास है। जिस पर वह पहुँच सकता है।
4. **स्वामी विवेकानन्द** – "हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।"

शिक्षा के सम्बन्ध में जो विचार ऊपर व्यक्त किये गये हैं, उनसे शिक्षा के प्रभाव और महत्त्व को भली प्रकार से समझा जा सकता है।

अतः शिक्षा वह साधन व कला है जो व्यक्ति के अन्दर छुपी हुई प्रतिभाओं को बाहर निकालती है यह एक ऐसा मंत्र है जो व्यक्ति के मस्तिष्क में फैले अज्ञान के अंधकार को बाहर निकालकर ज्ञान का प्रकाश फैलाती है।

वेदान्त दर्शन में शिक्षक का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है वेदान्त दर्शन मानता है कि गुरु की सहायता के अभाव में ज्ञान की प्राप्ति असम्भव है।

चार्वाक दर्शन विश्वास करता है कि मनुष्य का विकास उसके स्वभाव पर निर्भर करता है शिक्षक को एक प्रबंधक की भाँति माना गया है। शिक्षक को बालक की स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे बालक की स्वाभाविक इच्छापूर्ति में बाधा आ सकती है।

गीता में ज्ञान व ज्ञानदान को अतिमहत्त्वपूर्ण माना गया है और ज्ञानदान को सर्वश्रेष्ठ दान की संज्ञा दी गयी है।

सर्वेषामेवः दानानां ब्रह्मदान विशिष्यते।
वार्यन्न गोमाहिवासस्तिलककन्चन सर्पिषम।। (गीता 4/33)

अर्थात् – जल, अन्न, गौ, पृथ्वी, वस्त्र, तिल, स्वर्ण और घी सभी दानों में ज्ञान का दान सर्वश्रेष्ठ है।

गीता में शिक्षक से अपेक्षा की गयी है कि वह छात्रों को चिंतामुक्त रखे और उनसे प्रेमभाव रखे। शिक्षक छात्रों को सुझाव दे और निर्णय का उत्तरदायित्व छात्र पर ही छोड़ दे।

बौद्ध दर्शन में एक शिक्षक उसे माना गया है जो चार आर्य सत्यों का ज्ञाता और आष्टांगिक मार्ग पर चलने वाला हो, ताकि छात्र उसको आदर्श मानकर उसका अनुसरण कर सकें।

जैन दर्शन 'सांसारिक विषयों में विशेषज्ञता' के साथ पाँच महाव्रतों का पालन करने वाले दसागुण धर्मों से युक्त अनुशासित जीवन को शिक्षक के लिए आवश्यक मानता है जैन दर्शन में शिक्षक के गुणों की निम्नांकित शब्दों में व्याख्या की गयी है।

1. छात्रों की शंका का निवारण करने वाली अध्यापन शैली।
2. सभी छात्रों के व्यक्तित्व का आदर करने वाला।
3. विषय में निष्णात जितेन्द्रिय और मनसा, वाचा, कर्मणा संयमित।

वस्तुतः सभी भारतीय दर्शन आध्यात्मिकता के विटप की शाखायें है। अतः मोक्ष या सांसारिकता से मुक्त सभी दर्शनों का मूल उद्देश्य और अन्तिम लक्ष्य है। सभी दार्शनिक सम्प्रदाय मोक्ष, मुक्ति या ब्रह्म की प्राप्ति के लिए ज्ञान को साधन के रूप में स्वीकार करते हैं, साथ ही यह भी स्वीकारते हैं कि ज्ञान प्राप्ति गुरु के सानिध्य एवं संरक्षण में ही संभव है क्योंकि गुरु ज्ञानरश्मियों से अलंकृत सूर्य हैं जो अज्ञान के अंधकार के निवारण में समर्थ हैं।

सभी भारतीय दर्शनों में शिक्षकों को अतिमानव की सीमा तक विशाल व अन्नत व्यक्तित्व के रूप में चित्रित किया गया है गुरु को ईश्वर के समान श्रद्धा और सम्मान का अधिकारी माना गया है। इसके साथ गुरु को महान उत्तरदायित्व भी सौंपे गये हैं। संक्षेप में, भारतीय दर्शन शिक्षक को शिक्षा का आधार स्तम्भ मानता है।

2. आधुनिक पाश्चात्य दर्शन

आदर्शवाद में शिक्षक का महत्त्वपूर्ण स्थान है शिक्षक ज्ञान का स्त्रोत और बालक के लिए आदर्श व्यक्तित्व है। आदर्शवादी शिक्षक को 'ळववक वद म्तजी' के रूप में निरूपित करते हैं।

प्रकृतिवाद में शिक्षक को उद्यान का ऐसा माली माना गया है जो पौधे के लिए भूमि तैयार करता है परन्तु पौधे अर्थात् छात्र के विकास में हस्तक्षेप नहीं करता है।

प्रयोजनवाद में शिक्षक नये प्रयोगों व सिद्धान्तों का निरूपण करने वाला महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है शिक्षक में योग्यता को आवश्यक माना गया है क्योंकि सम्पूर्ण शिक्षा शिक्षक की योग्यता पर निर्भर करती है।

यथार्थवाद एवं 'समर्थ शिक्षक' की अवधारणा प्रस्तुत करता है, ऐसा शिक्षक जिसे विषयवस्तु एवं बालक की यथार्थ आवश्यकताओं का ज्ञान हो।

अस्तित्ववाद में शिक्षक को महत्त्वपूर्ण माना गया है क्योंकि शिक्षक ही बालक को 'स्वयं' से सम्पर्क स्थापित करने में सहायता प्रदान करता है।

मानवतावादी दर्शन मानता है कि सच्ची शिक्षा शिक्षक और शिक्षार्थी के सीधे सम्प्रेक्षण से ही सम्भव है। इसलिए शिक्षक को गौरवपूर्ण स्थान दिया गया है। राधाकृष्णन् उस विद्यार्थी को बेहतर मानते हैं जिसने बेहतर शिक्षक से शिक्षा पाई हो।

पाश्चात्य दर्शन सांसारिकता के निकट है प्रकृतिवाद के अतिरिक्त सभी दार्शनिक सम्प्रदाय शिक्षक को भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण मानते हैं।

विभिन्न कालखण्डों में शिक्षक की स्थिति

1. प्राचीन काल – गुरु को ईश्वरतुल्य मानते हुये उनको ऋषि या आचार्य की संज्ञा प्रदान की गयी थी। गुरु के महत्त्व को निम्न श्लोक में स्पष्ट किया गया है–

गुरुर्ब्रहमा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवोमहेश्वरः।
गुरु साक्षात पश्चब्रह्म तस्मैः श्री गुरुवैनमः।।

2. मुस्लिम काल – समाज और छात्रों के हृदय में शिक्षकों के प्रति स्नेह और श्रद्धा की भावना हिन्दू–कालीन प्राचीन शिक्षा की भाँति विद्यमान थी। गुरु यद्यपि ईश्वर तुल्य नहीं माना जाता था। तथापि पितृवत् गुरु का सम्मान किया जाता था।

3. आंग्ला काल – अंग्रेजों के आरम्भिक काल में भारतीय शिक्षा–पद्धतियों का ह्रास आरम्भ हो चुका था और गुरु–शिष्य के स्नेहपूर्ण एवं अपनत्वपूर्ण सम्बन्धों की परम्परा नष्ट हो चुकी थी। विद्यालय किसी कार्यालय की भाँति और शिक्षक कर्मचारी की भाँति अपनी सीमित भूमिका में आने लगे थे।

यही वह काल है जहाँ भारत में शिक्षक–प्रशिक्षण, वेतन, जीवन स्तर एवं संतुष्टि जैसे शब्दों के बीज पड़े। इस काल में शिक्षकों को आर्थिक स्थिति दयनीय और सामाजिक स्थिति असम्मानजनक थी।

4. स्वतन्त्रता उपरान्त – विभिन्न दार्शनिक सम्प्रदायों एवं शिक्षक पद्धतियों ने मनोविज्ञान एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रभावित होकर शिक्षा को बालकेन्द्रित करने पर जोर दिया है।

शिक्षक की भूमिका, हस्तक्षेप व संरक्षण को कम से कमस्तर करने पर जोर दिया जाने लगा है।

आधुनिक काल में औद्योगिक संस्थानों के कर्मियों की भाँति शिक्षकों के संगठन हैं समाज में शिक्षकों के सम्मान में कमी आई है। शिक्षकों द्वारा अध्यापन छोड़ अन्य व्यवसायों में जाने की घटनायें बढ़ी हैं। शिक्षकों में व्यवसाय के प्रति विमुखता, उत्तरदायित्वहीनता और कामचलाऊ रवैया बढ़ने की शिकायतें समाज के विभिन्न माध्यमों से उठने लगी है। गुरु–शिष्य संबंधों में श्रद्धा, सम्मान और स्नेह का स्थान शंका, छिद्रन्वेषण और व्यावसायिक दृष्टिकोण ने ले लिया है।

प्राचीनकाल से आज तक के उपरोक्त विवरण में हम पाते हैं कि समाज में शिक्षक का महत्व और सम्मान निरंतर ह्रास की ओर अग्रसर है। इस स्थिति में शिक्षकों में विचलन की स्थिति को जन्म दिया है और इसी कारण शिक्षा मनोविज्ञान में 'समायोजन' या 'कुसमायोजन' की आवश्यकता शिक्षकों के सन्दर्भ में भी अनुभव की जाने लगी है।

समायोजन – समायोजन एक सार्वभौतिक तथा निरनतर चलने वाली प्रक्रिया है। पर्यावरण से समायोजन तथा आत्मा का समायोजन दोनों ही महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक मनुष्य अपनी आवश्यकताओं व लक्ष्यों की पूर्ती में आने वाले भग्नाशालों, अर्न्तद्वन्द्व और प्रतिबल पर विजय प्राप्त करने

का प्रयास करता रहता है। यदि वह भग्नाशालों एवं प्रतिबल से बचना चाहता है तो उसे परिस्थितियों से समायोजन करके चलना आवश्यक है।

आइजनेक के अनुसार – "समायोजन वह अवस्था है जिसमें एक व्यक्ति की आवश्यकतायें और दूसरी ओर वातावरण के कुछ दावे पूर्णरूप से संतुष्ट होते हैं अथवा समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा इनमें सामंजस्यपूर्ण संबंध प्राप्त होता है।"

समायोजन की समस्याएँ

प्रतिबल – प्रतिबल वास्तव में चिंता, अन्तर्द्वन्द्व, संवेग और कुण्ठा का मिश्रित रूप हैं। प्रतिबल के परिणाम स्वरूप व्यक्ति को समायोजन करना पड़ता है।

दबाव – आत्मप्रतिष्ठा के लिए व्यक्ति को आंतरिक दबाव बनाना पड़ता है। दबाव के कारण व्यक्ति अपने व्यवहार में परिवर्तन लाता है और परिवर्तन को गति प्रदान करता हैं

दबाव रचनात्मक होता है जब व्यक्ति अपनी योग्यताओं व क्षमताओं का समाज के उच्च मूल्यों एवं आदर्शों के साथ तदात्म्य स्थापित कर लेता है। किन्तु यदि व्यक्ति स्वयं को असफल मान ले तो दबाव विनाशक होता है।

चिन्ता – कोलमेन चिंता को डर और आशंका की सामान्यीकृत अनुभूति के रूप में निरूपित करते हैं। जब व्यक्ति किसी न किसी रूप में स्थाई रूप में चिन्ताग्रस्त रहता है तो इसे ज्तंपज ।दगपमजल कहते हैं।

अन्तर्द्वन्द – कर्टलेविन के अनुसार – "अन्तर्द्वन्द व्यक्ति की एक प्रकार की अवस्था है जिसमें व्यक्ति की विरोधी और समान शक्ति वाली शक्तियाँ एक ही समय में कार्यरत रहती है।"

कुण्ठा – "कुण्ठा को असफलता का प्रतीक कह सकते हैं। किसी लक्ष्य की प्राप्ति में असफल रहने पर कुण्ठा महसूस होती है।"

मन के अनुसार – "कुण्ठा व्यक्ति की वह अवस्था है जो किसी प्रेरणायुक्त व्यवहार की संतुष्टि कठिन अथवा असंभव हो जाने के कारण पैदा होती है।"

समायोजन को अंश या तीव्रता के आधार पर श्रेणीबद्ध किया जा सकता है यह संभव नहीं है कि किसी व्यक्ति की सभी इच्छायें व आवश्यकताऐं पूर्ण हो जायें। यह भी संभव नहीं है कि किसी व्यक्ति की सभी इच्छायें व आवश्यकताऐं अपूर्ण ही रहे। समायोजन को निम्न श्रेणियों में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है।

समायोजनात्मक प्रतिक्रियाऐं – समायोजनात्मक प्रतिक्रियाओं में व्यक्ति की रचनात्मक प्रतिक्रियाऐं मुख्यतः प्रदर्शित होती हैं व्यक्ति अपनी प्रेरणाओं के साथ सामाजिक मान्यताओं को सन्तुलन करने का प्रयास करता है।

अर्द्धसमायोजनात्मक प्रतिक्रियाऐं – सभी प्रेरणाऐं पूर्णतः समायोजनात्मक सिद्ध नहीं होती है कुछ प्रेरणार्थ लक्ष्य से पीछे के स्तर तक ही संतुष्ट हो पाती है। ऐसी अवस्था में व्यक्ति कल्पना के माध्यम से अशतः संतुष्ट हो जाता है। किन्तु उसे पूर्ण एवं वास्तविक संतुष्टि प्राप्त नहीं हो पाती है।

असमायोजनात्मक प्रतिक्रियाऐं – जब व्यक्ति अपनी प्रेरणाओं एवं परिस्थितियों में समायोजन नहीं कर पाता है अथवा समायोजन को बाधित करने वाले कार्यों को निरन्तर करता है तो इस प्रकार की प्रतिक्रियाओं को असमायोजनात्मक प्रतिक्रियाऐं कहते हैं। असमायोजित व्यक्ति परिस्थितियों के प्रति प्रतिक्रिया करने से इनकार कर देता है या परिस्थितियों के प्रतिनिषेधात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त करता है या शैशवकालीन व्यवहार से सम्बन्धित क्रियायें करता है।

कुसमायोजनात्मक प्रतिक्रियायें – सीशोर एवं कात्ज के अनुसार कुसमायोजित प्रतिक्रियाओं में निम्न तत्व होते हैं–

1. व्यक्ति की इच्छित लक्ष्यों या उनके उपयुक्त स्थानापन्न लक्ष्यों की प्राप्ति से दूर ले जाना।
2. व्यक्ति की अस्थाई सांत्वना – जो वास्तव में हानिकारक हो – प्रदान करना।
3. व्यक्ति समाज पर बोझ बन जाये, दूसरों से सहायता ले किन्तु दूसरों की सहायता न करे।
4. व्यक्ति के शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य में कार्यदक्षता में तथा आत्मविश्वास में ह्रास।

कुसमायोजन – शिक्षा कोश (यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन) में कुसमायोजन का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा गया है कि – "अपने पर्यावरण से प्रतिक्रिया करने का ऐसा ढंग जो व्यक्ति या समाज के लिए हानिकारक हो, जीविका तथा समाजिक और उच्च अभिप्रायों की एक साथ तृप्ति में वास्तविक जगत से प्रभावकारी व्यवहार न कर सकने की स्थिति। इस कुसमायोजन के कई पक्ष हो सकते हैं जैसे– व्यक्तित्व संबंधी – जिसमें जन्मजात दोषों अथवा किसी अन्य अव्यवस्था के कारण व्यक्ति पर्यावरण के अनुकूल नहीं कर पाता, संवेगात्मक – जिसमें अनुपयुक्त या अपर्याप्त भावनात्मक संबंध अच्छे नहीं रख पाता, सामाजिक – जिसमें व्यक्ति समाज मान्य आचरण और मूल्यों को स्वीकार कर उनके अनुकूल व्यवहार नहीं कर पाता, शैक्षिक– जिसमें शिक्षकों या छात्रों के कार्यक्रमों या सम्बन्धों में व्यवधान डालने वाली कोई स्थिति उत्पन्न हो जाती है, व्यावसायिक– जिसमें व्यक्ति की योग्यताओं और रूचियों तथा व्यवसाय की आवश्यकताओं में सामंजस्य नहीं होता है।"

कुसमायोजन की पहचान निम्न लक्ष्णों के आधार पर की जा सकती है।

शारीरिक लक्षण – हकलाना, सिर खुजलाना, नाखून कुतरना, चेहरे बनाना, पैरों को हिलाना–डुलाना, बेचैनी का अनुभव आदि।

व्यवहार विचलन – आक्रामकता, असत्यभाषण, नकारात्मक सोच, यौन अक्षमता, निम्न शैक्षिक उपलब्धि आदि।

भावनात्मक लक्षण – चिंता, अंतर्द्वन्द, तनाव उत्साह हीनता, भय असुरक्षा की भावना और हीन भावना आदि।

शिक्षकों में समायोजन और कुसमायोजन

स्वतः ही दृष्टि से प्रतीत होता है कि सामान्यतः शिक्षक शांत, सुखी एवं सामान्य जीवनयापन करते हैं, और शिक्षक अपने व्यवसाय के प्रति पूर्णतः समायोजित होते हैं किन्तु अन्ततवोगत्वा शिक्षक भी मनुष्य होते हैं और अन्य मनुष्यों की भाँति शिक्षकों का भी संवेगात्मक पक्ष होता है। अतः शिक्षक भी कुसमायोजित हो सकते हैं। इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता है जैसा कि डॉ0 एस0 एस0 माथुर स्वीकार करते हैं– "भारतीय स्थिति में हमारे पास इसका विवरण नहीं है कि कितने शिक्षक कुसमायोजित होते हैं, किन्तु अमेरिका के अनेक अध्ययन इस ओर संकेत हैं कि पर्याप्त संख्या में शिक्षक कुसमायोजित होते हैं।"

सामान्यतः शिक्षक के कुसमायोजित की अभिव्यक्ति उसके दण्ड देने के तरीकों, छात्रों के मानसिक पीड़न, दुश्चिंता, आक्रामकता, निम्न सहनशीलता, अनिद्रा एवं साथियों के साथ निरन्तर टकराव के रूप में होती है।

समस्या की उत्पत्ति

यह एक स्वानुभूत समस्या है। अपनी बाल्यावस्था में अनुसंधानकर्ता ने देखा है कि शिक्षक केवल विद्यालय का सर्वेसर्वा नहीं होता था, वरन् शिक्षक सम्पूर्ण समाज को मार्गदर्शन व नेतृत्व प्रदान करता था। क्या इसी सम्मानित स्थान पर प्राथमिक शिक्षक आज है? आये दिन प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के संदर्भ में समाचार पत्रों एवं अन्य माध्यमों में नकारात्मक टिप्पणियाँ एवं रिपोर्ट प्रकाशित होती रहती है। इससे भी मानस में प्रश्न उभरता है कि आखिर क्यों शिक्षक की सत्यनिष्ठा एवं कर्त्तव्यनिष्ठा प्रश्नों के घेरे में आ गयी है? इसी प्रकार के प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए अनुसंधानकर्त्ता ने 'प्राथमिक शिक्षकों के समायोजन' को अपने लघु शोध की समस्या के रूप में चयनित किया।

समस्या का कथन

जिला बिजनौर के ग्रामीण प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों के कार्यक्षेत्र में समायोजन की स्थिति का अध्ययन

अध्ययन का महत्त्व

एक शिक्षक के लिए समायोजन अन्य व्यवसाय से जुडे लोगों की तुलना में महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक है न केवल स्वंय व्यक्तिगत विकास के लिए अपितु शिक्षार्थियों के विकास एवं शिक्षा प्रक्रिया की सफलता के लिये भी। यह एक सार्वभौमिक सत्य है कि अध्यापक के व्यक्तित्त्व का स्पष्ट रूप से छात्र पर प्रभाव पड़ता है। सुसमायोजित अध्यापक का व्यक्तित्व छात्र के सर्वांगीण विकास में उत्प्रेरक का कार्य करता है परन्तु कुसमायोजित अध्यापक के दोषपूर्ण व्यक्तित्व की छाया में छात्र के व्यक्तित्व का सकारात्मक विकास असंभव है।

प्रस्तुत अध्ययन इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है कि इसमें अध्यापकों के समायोजन को मापने एवं उसकी व्याख्या करने का प्रयास किया गया है यद्यपि इस लघु शोध में विस्तार से समायोजन के लिए उत्तरदायी कारकों पर प्रकाश नहीं डाला गया है। परन्तु फिर भी इस अध्ययन से इस तथ्य से अवगत होने का अवसर मिलेगा कि क्या देश का भविष्य बिल्कुल सही हाथों में है? पूर्व अध्ययनों की तुलना में इस अध्ययन की सार्थकता इस रूप में समझी जा सकती है कि यह अध्ययन प्राथमिक शिक्षकों के सन्दर्भ में इस पिछड़े क्षेत्र में किया जा रहा है।

शब्दों का परिभाषीकरण

बिजनौर – बिजनौर, उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद मण्डल के उत्तर पश्चिम में स्थित है। इसकी पश्चिमी सीमा पर गंगा नदी है, जिसके पार देहरादून, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर स्थित है। बिजनौर का क्षेत्रफल 4634.75 वर्ग किलोमीटर है। जिला बिजनौर में 11 विकासखण्ड हैं, जिसमें नजीबाबाद, किरतपुर, मौहम्मदपुर देवमल, हल्दौर, खारी झालू, कोतवाली, अफजलगढ़, नहटौर, अल्हैपुर, बुढ़नपुर स्योहारा, नूरपुर।

प्राथमिक विद्यालय – बेसिक शिक्षा परिषद् द्वारा संचालित वे विद्यालय जिनमें कक्षा 1 से कक्षा 5 तक की कक्षाओं का संचालन किया जाता है ऐसे विद्यालय प्राथमिक शिक्षा के अन्तर्गत आते हैं।

ग्रामीण प्राथमिक विद्यालय – शहर से 5 कि0मी0 की परिधि के बाहर आने वाले प्राथमिक विद्यालय, ग्रामीण प्राथमिक विद्यालय कहलाते हैं।

प्राथमिक विद्यालय के अध्यापक – प्राथमिक विद्यालय में शिक्षण हेतु बेसिक शिक्षा परिषद् द्वारा नियुक्त अध्यापक, जो कक्षा 1 से कक्षा 5 तक शिक्षण करते हैं।

समायोजन – सरलतम शब्दों में समायोजन व्यक्ति और उसके वातावरण के मध्य सहज सम्बन्ध है।

प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों का कार्य क्षेत्र – प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों के कार्य क्षेत्र से तात्पर्य उस निश्चित भौगोलिक क्षेत्र से है। जिस क्षेत्र में उक्त प्राथमिक विद्यालय अवस्थित है।

सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण

शोध समस्या के चयन के पश्चात् उस समस्या से सम्बन्धित हुए पूर्व शोध कार्यों की जानकारी के लिए सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण किया जाता है।

सम्बन्धित साहित्य के सर्वेक्षण के बिना अनुसंधान कार्य प्रारम्भ श्रम, धन और समय को नष्ट करने के समान है, इसकी आवश्यकता एवं उपयोगिता को पहचानते हुए वेस्ट (1963) के अनुसार–

मानव ज्ञान पुस्तकों एवं पुस्तकालयों में प्राप्त किया जा सकता है; अन्य जीवों के अतिरिक्त जो प्रत्येक पीढ़ी नये सिरे से प्रारम्भ करते हैं। मानव समाज अपने प्राचीन अनुभवों को संग्रहीत एवं सुरक्षित रखता है। ज्ञान के अथाह भण्डार में मानव का निरन्तर योग सभी क्षेत्रों में उसके विकास का आधार है।

अनुसंधानकर्ता को समस्या सम्बन्धित पूर्व अनुसंधानों का सावधानीपूर्वक सर्वेक्षण करना होता है; ताकि वह यह समझ सके कि पूर्व अनुसंधानों में क्या कमियाँ रही हैं, उनमें प्रविधि सम्बन्धी कोई दोष है। उनमें से किसी एक अनुसंधान के निष्कर्षों में कोई दोष है या कोई अभाव है? सम्भवतः इन्हीं अभावों को अनुसंधानकर्ता अपने अनुसंधान में दूर करने का प्रयास करता है।

एन0सी0ई0आर0टी0 रिर्पोट (1971) – "A Study of Reaction of Teachers Toward Teaching Profession" शीर्षक से किये गये इस अध्ययन को निम्न उद्देश्यों पर आधारित किया गया था–

1. अपने व्यावसायिक जीवन एवं योग्यता से जुड़े विभिन्न प्रश्नों के सम्बन्ध में शिक्षकों की प्रतिक्रियायें ज्ञात करना।
2. यह ज्ञात करना कि क्या शिक्षक की प्रतिक्रियाऐं संचालन समिति क्षेत्र, लिंग, आयु, अनुभव, शैक्षणिक व व्यावसायिक योग्यता एवं दाम्पत्य जीवन इत्यादि से संबंधित है?

देश भर के 377 हायर सेकेण्डरी एवं इण्टरमीडिएट विद्यालयों के 6553 शिक्षकों के न्यादर्श पर आधारित इस अध्ययन की प्रमुख प्राप्तियाँ निम्नवत् थीं–

1. विभिन्न प्रबंधन मण्डलों के अधीन कार्य करने वाले शिक्षकों की प्रतिक्रियायें भिन्न थीं।
2. शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के दृष्टिकोण में अंतर पाया गया।
3. वैवाहिक जीवन व्यावसाय के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण को प्रभावित नहीं करता है।
4. प्रौढ़ शिक्षकों की अपेक्षा युवा शिक्षकों का दृष्टिकोण व्यावसाय के प्रति सकारात्मक पाया गया।
5. उच्च शिक्षा प्राप्त शिक्षकों की अपेक्षा निम्न शैक्षिक योग्यता वाले शिक्षकों की विचारधारा शिक्षण व्यावसाय के प्रति सकारात्मक पायी गयी।

खत्री पी0 पी0 (1973) ने & "A Comparative Study of the Self Concept of Teachers of Different Catagories and Relationship of Their Self Concept with Professional Adjustment" विषयक अपने अध्ययन के लिए प्राथमिक, माध्यमिक व कॉलेज स्तर के 900 शिक्षकों का न्यादर्श लिया और निम्न निष्कर्ष प्राप्त किये।

1. प्राथमिक, माध्यमिक और कॉलेज अध्यापकों में आत्म प्रत्यय अनुभव करने में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया।
2. कॉलेज एवं प्राथमिक शिक्षकों के व्यावसायिक समायोजन में सार्थक अन्तर पाया गया।
3. माध्यमिक एवं प्राथमिक शिक्षकों के व्यावसायिक समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
4. आत्म–प्रत्यय एवं व्यावसायिक समायोजन में सार्थक संबंध पाया गया।

लविंगिया के0 यू0 (1974) ने 1600 प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षकों का न्यादर्श लेकर "A Study of Job Satisfaction Among School Teachers" नाम अपने अध्ययन में निम्न निष्कर्ष प्राप्त किये।

1. प्राथमिक शिक्षक माध्यमिक शिक्षकों की अपेक्षा संतुष्ट पाये गये।
2. शिक्षिकायें शिक्षकों की तुलना में अधिक संतुष्ट पायी गयी।
3. अध्यापक सेवाकाल के आरम्भिक वर्षों में अधिक संतुष्ट रहते हैं, ऐसा पाया गया।
4. अविवाहित शिक्षक अधिक संतुष्ट पाये गये।
5. कार्य क्षमता कार्य संतुष्टि से सार्थक रूप में सहसंबंधित पायी गयी।

गुप्ता वी0 पी0 (1977) का अध्ययन "Personality Characteristics, Adjustment Level, Academic achievement and Professional Attitude of Successful Teachers" 400 शिक्षकों (जिनमें पुरुष व महिलायें क्रमशः 200 व 200 थे) के न्यादर्श पर आधारित था। इस अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष निम्नवत् थे–

1. शिक्षण की सफलता जीवन के विभिन्न क्षेत्रों (यथा– घर, स्वास्थ्य, सामाजिक, सांवेगिक) में समायोजन और परिपूर्ण समायोजन पर निर्भर पायी गयी।
2. उच्च सफल शिक्षकों एवं निम्न सफल शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अंतर पाया गया। अर्थात् समायोजन शिक्षण की सफलता को प्रभावित करता है।

कोल्टे एन0 वी0 (1978) ने राष्ट्रीय विकास संस्थान के अधीन "Job Satisfaction of Primary School Teachers : A Test of the Generality of the Two Factor Theory" शीर्षक से एक अध्ययन प्रस्तुत किया। इस अध्ययन के उद्देश्य निम्नवत् थे।

1. शिक्षकों की कार्य संतुष्टि या कार्य असंतुष्टि के लिये उत्तरदायी कारकों की पहचान करना।
2. कार्य संतुष्टि के लिए हर्त्जबर्ग के 'द्विकारक सिद्धान्त' की वैधता की जाँच करना।

न्यादर्श के रूप में महाराष्ट्र के बुलडाना जिले की 6 पंचायत समितियों को चुना गया। अध्ययन की प्रमुख प्राप्तियाँ इस प्रकार थी–

1. कार्य संतुष्टि के 42 अवसरों पर पाया गया कि उपलब्धि संतुष्टि की भावना के लिए उत्तरदायी थी।

2. कार्य स्वयं संतुष्टि एक कारक है।
3. 18 अवसरों पर 'वृद्धि' कार्य के प्रति संतुष्टि के लिये उत्तरदायी पायी गयी।
4. यदि प्रबंधन की नीतियाँ पति–पत्नी को एक ही स्थान पर नियुक्त करें तो यह कार्य संतुष्टि के लिये उत्तम पाया गया।
5. 35 अवसरों पर खराब नीतियाँ कार्य असंतुष्टि के लिए उत्तरदायी पायी गयी।
6. हर्त्जबर्ग का 'द्विकारक सिद्धान्त' इस अध्ययन के द्वारा पूर्णतः सत्यापित नहीं हो पाया।

गोयल जे0 सी0 (1980) ने "A Study of the Relationship among Attitudes, Job Satisfaction Adjustment and Professional Interest of Teacher Educations in India" शीर्षक से किये गये अध्ययन के लिए 38 संस्थानों के 341 ज्मंबीमत म्कनबंजवते को न्यादर्श के रूप में लिया और निम्न निष्कर्ष हासिल किये–

1. एक विस्तृत बहुमत में Teacher Educators का झुकाव अपने व्यावसाय के पक्ष में पाया गया और वे अपने व्यवसाय से संतुष्ठ पाये गये। यद्यपि वे उच्च समायोजित नहीं थे और निम्न व्यावसायिक रूचि से युक्त थे।
2. विभिन्न समूहों की अभिरूचि और कार्य संतुष्टि में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।
3. ज्मंबीमते म्कनबंजवते में सांवेगिक परिपक्वता उम्र के साथ बढ़ती है।
4. व्यावसायिक रूचि विद्यालय में शिक्षण अनुभव के साथ बढ़ती है।
5. कार्य संतुष्टि की भविष्योक्ति अभिरूचि और व्यावसायिक समायोजन से की जा सकती है।

चोपड़ा आर0 के0 (1892) ने अपने अध्ययन "A Study of the Drganizational Climate of Schools in Relations to Job Satisfaction of Teacher and Students Achievement" से यह निष्कर्ष प्राप्त किया कि खुले वातावरण युक्त विद्यालयों के शिक्षकों की तुलना में बंद वातावरण युक्त विद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतुष्टि निम्न स्तर की थी।

मल्ल कु0 उत्तरा (1986) का अध्ययन "संस्थागत वातावरण एवं शिक्षक अभिवृत्ति का अध्ययन" अध्यापकों के सन्दर्भ में निम्न निष्कर्षों से अवगत कराया है।

1. शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के राजकीय इण्टर कॉलेजों के शिक्षकों की शिक्षण अभिवृत्ति में सार्थक अंतर पाया गया।
2. शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के राजकीय इण्टर कॉलेजों की शिक्षिकाओं की शिक्षण अभिवृत्ति में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया।
3. बालिका विद्यालयों की शिक्षिकाओं में नैतिक बल एवं कार्य के प्रति संतुष्टि की भावना शिक्षकों की तुलना में अधिक पायी गयी।

सिंह भूपेन्द्र (2001) ने "चमोली जिले में प्राथमिक शिक्षा के प्रबन्धन एवं प्रशासनिक ढाँचे का एक अध्ययन" विषयक अपने अध्ययन से निम्न निष्कर्ष प्राप्त किये–

1. प्रबंधन की नीतियों में अध्यापकों को भागीदार नहीं बनाया गया।
2. शिक्षक अपने व्यावसाय से पूर्ण रूपेण संतुष्ट नहीं पाये गये।
3. अध्यापकों को समुचित सम्मान प्राप्त नहीं हो रहा, ऐसा पाया गया।
4. शिक्षक अपनी सेवा शर्तो से संतुष्ट नहीं पाये गये।
5. शिक्षकों की व्यक्तिगत समस्याओं का समाधान समय से नहीं हेाता है, ऐसा पाया गया।
6. शिक्षकों द्वारा किये जाने वाले शिक्षणेत्तर कार्यों से शिक्षण कार्य बाधित होता है।

वशिष्ट अनूप कुमार (2002) "रूद्रप्रयाग जनपद के प्राथमिक स्तर के शिक्षक–शिक्षिकाओं की व्यावसायिक समस्याओं का अध्ययन" विषयक अपने अध्ययन के लिए जिला रुद्रप्रयाग के 88 विद्यालयों के 100 शिक्षकों व 100 शिक्षिकाओं को न्यादर्श के रूप में लिया और निम्न निष्कर्ष प्राप्त किये–

1. अधिसंख्य शिक्षकों का विद्यालय जहाँ वे नियुक्त हैं उनकी इच्दा के विपरीत पाया गया।
2. सामान्य से कम शिक्षक–शिक्षिकायें स्थानीय लोगों के व्यवहार से परेशान पाये गये।
3. अधिसंख्य शिक्षक–शिक्षिकाओं की घरेलू परिस्थितियाँ असंतोषजनक पायी गयी।
4. अधिकांश शिक्षकों को समय पर वेतन नहीं मिल पाता।
5. अधिसंख्य शिक्षक–शिक्षिकाओं के प्रति सहकर्मियों का व्यवहार अच्छा है।
6. बहुत कम शिक्षकों ने बाध्य होकर यह व्यवसाय अपनाया है।
7. अधिसंख्य शिक्षक इस कारण मानसिक परेशानी अनुभव करते हैं कि उनके विद्यालयों में भिन्न–भिन्न कक्षाओं के लिए पृथक–पृथक कक्ष नहीं है।

सिंह, अरुण कुमार एवं सिंह, आशीष कुमार (2002) ने अपने शोध पत्र "Job Satisfaction as a Function of Extrinsic Factor of Job" में 90 कर्मियों के न्यादर्श पर किये गये अध्ययन से निम्न निष्कर्ष प्राप्त किये–

1. आयुवृद्धि के साथ–साथ कर्मियों में कार्य संतुष्टि के स्तर में उन्नयन की प्रवृत्ति पायी गयी।
2. उच्च बुद्धिलब्धि युक्त कर्मियों में सामान्यतः निम्न बुद्धिलब्धि युक्त कर्मियों की तुलना में बेहतर कार्य संतुष्टि स्तर पाया गया।
3. लिंग कार्य संतुष्टि को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में से नहीं है।

4. जहाँ पति–पत्नी में से सिफ एक कार्यरत है ऐसे कर्मियों की तुलना में उन कर्मियों की कार्य संतुष्टि का स्तर उच्च पाया गया जहाँ पति–पत्नी दोनों कार्य करते हैं।

शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र में वर्णनात्मक–सर्वेक्षणात्मक अनुसंधान का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मौले (1963) के अनुसार – "वर्णनात्मक सर्वेक्षण संबंधी अनुसंधान शिक्षा के क्षेत्र में सबसे अधिक व्यवहार में आता है। इसके अनेक नाम हैं यथा– सर्वे, नार्मेटिव सर्वे, स्टेटस तथा वर्णनात्मक अनुसंधान आदि।"

वर्णनात्मक अनुसंधान को परिभाषित करते हुए जॉन डब्लू0 बेस्ट (1963) ने लिखा है– "वर्णनात्मक अनुसंधान क्या है?" का वर्णन और विश्लेषण करता है। परिस्थितियाँ अथवा संबंध जो वास्तव में वर्तमान में है, अभ्यास जो चालू है, विश्वास, विचाराधारा अथवा अभिवृत्तियाँ जो पायी जा रही हैं, प्रक्रियायें जो चल रही हैं। अनुभव जो प्राप्त किये जा रहे हैं अथवा नई दिशायें जो विकसित हो रही हैं, उन्हीं से इसका सम्बन्ध है।

जनसंख्या – जनसंख्या को परिभाषित करने से पहले दो शब्द चर एवं इकाई जो कि जनसंख्या से सम्बन्धित है के बारे में जानना आवश्यक है।

चर – प्रायः जिस रूप, विशेषता, अथवा अवस्था का अध्ययन करना हमारा मुख्य उद्देश्य होता है, उसे चर कहते हैं। इस लघु शोध में अध्यापकों की विभिन्न समायोजन स्थितियाँ वह चर हैं जिसका हमें अध्ययन करना है।

इकाई – इकाई चर की वह मात्रा कहलाती है जो हमें छोटे से घटक के रूप में ज्ञात होता है। इस लघु–शोध में अध्यापक एक इकाई को प्रदर्शित करता है।

अर्थात् जनसंख्या का अर्थ इकाईयों का समूह होता है। अर्थात् इकाईयों के पूर्ण समूह को जिसके लिए चर का मान निकालना अभीष्ट होता है जनसंख्या कहते हैं।

अतः जनसंख्या का अर्थ अध्ययन की सम्पूर्ण इकाईयों के समूह में लिया जाता है। शोध कार्य आगमन चिंतन द्वारा किया जाता है। शोध विशिष्ट से सामान्य की ओर बढ़ता है। अर्थात् जनसंख्या इकाईयों का वह पूर्ण समूह है जिससे हम शोध के लिये न्यादर्श लेते है। अतः इस लघु–शोध में कुल 204 विद्यायलों में 333 शिक्षक हैं जिनमें 155 पुरुष व 178 महिलाएँ हैं, जो कि हमारी सीमित जनसंख्या है।

विकासखण्ड	कुल विद्यालय	शिक्षकों की कुल संख्या		
		पु0	म0	कुल
नजीबाबाद	204	155	178	333

न्यादर्श – जब किसी जनसंख्या (वस्तुओं या मनुष्यों का समूह) में किसी चर का विशिष्ट मान ज्ञात करने के लिए कुछ इकाईयों को चुन लिया जाता है, तो इकाईयों के चयनित समूह को न्यादर्श कहते हैं जो सम्पूर्ण जनसंख्या या सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व करता है।

विकासखण्ड	कुल विद्यालय	चयनित विद्यालय	शिक्षकों की कुल संख्या			चयनित शिक्षक		
			पु0	म0	कुल	पु0	म0	कुल
नजीबाबाद	204	79	155	178	333	63	62	125

प्रस्तुत अध्ययन के लिए सिर्फ प्रशिक्षित अध्यापक–अध्यापिकाओं को सम्मिलित किया गया है।

प्रस्तुत लघु शोध की समस्या उससे सम्बन्धित स्थानीय विशेषताओं एवं समस्या के विविध आयामों को समाहित करने वाला कोई प्रमाणीकृत उपकरण उपलब्ध न होने के कारण अनुसंधानकर्त्ता ने इस विषय पर होते आये अनुसंधानों के लिए नरेन्द्र सिंह द्वारा डॉ0 एम0 एल0 शाह के निर्देशन में बनी प्रश्नावली को लिया।

प्रश्नावली – प्रश्नावली क्रमबद्ध प्रश्नों की एक उद्देश्यपूर्ण तालिका है जिसके द्वारा वांछित सूचनाओं की प्राप्ति के लिए स्रोत को प्रेरित किया जाता है।

गुड या हैट (1962) के शब्दों में – "प्रश्नावली एक प्रकार का उत्तर प्राप्त करने का साधन है। जिसका स्वरूप ऐसा है कि उत्तरदाता उसकी पूर्ति स्वयं करता है।"

प्रश्नावली का चयन – सर्वप्रथम अनुसंधानकर्ता ने अनुसंधान पर केन्द्रित पुस्तकों का अध्ययन किया। समस्या अर्थात् समायोजन एवं कुसमायोजन पर लिखित साहित्य एवं अन्य प्रकार के संबंधित साहित्य का अध्ययन करने के साथ कुछ आदर्श प्रश्नावलियों का भी अवलोकन किया। इससे अनुसंधानकर्त्ता को प्रश्नावली के आयाम निर्धारित करने और प्रश्नों को तीक्ष्ण बनाने में सहायता मिली।

अनुसंधानकर्त्ता द्वारा निर्धारित सभी आयामों की संतुष्टि, स्पष्टतः नरेन्द्र सिंह द्वारा डॉ0 एम0 एल0 शाह के निर्देशन में बनी प्रश्नावली ने किया।

प्रश्नावली के अन्तिम स्वरूप में विभिन्न आयामों में प्रश्नों का विवरण और प्रश्नों की कुल संख्या निम्न तालिका द्वारा प्रदर्शित की गयी है। प्रश्नों के सकारात्मक व नकारात्मक स्वरूप को भी तालिका में स्पष्ट किया गया है।

क्र0 सं0		प्रश्नावली के आयाम प्रश्नों का स्वरूप	प्रश्नों की संख्या	योग
1	विद्यालयी वातावरण से समायोजन	सकारात्मक – 1, 2, 13, 24, 46, 47, 66, 70	08	12
		नकारात्मक – 29, 56, 67, 72	04	
2	व्यावसायिक समायोजन	सकारात्मक – 3, 4, 12, 14, 62, 64, 65	07	14
		नकारात्मक – 23, 35, 45, 54, 55, 73, 75	07	
3	छात्रों से समायोजन	सकारात्मक – 6, 57, 68, 71	04	11
		नकारात्मक – 5, 17, 25, 30, 36, 48, 60	07	
4	सामाजिक समायोजन	सकारात्मक – 8, 18, 31, 32, 37	05	15
		नकारात्मक – 7, 19, 26, 41, 42, 49, 58, 61, 63, 69	10	
5	मनोदैहिक समायोजन	नकारात्मक – 9, 10, 16, 20, 21, 27, 33, 38, 39, 43, 50, 51, 52, 59	14	14
			0	
6	परिवेशीय समयोजन	सकारात्मक – 15	01	9
		नकारात्मक – 11, 22, 28, 34, 40, 44, 53, 74	08	
	योग	सकारात्मक – 25	25	75
		नकारात्मक – 50	50	

प्रश्नावली के आयामों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

1. **विद्यालयी वातावरण से समायोजन** – इससे यह संकेत मिलता है कि शिक्षक विद्यालय के वातावरण में किस सीमा तक समायोजित है और क्या वह विद्यालय में स्फूर्ति, सहजता, व अपनापन अनुभव करते हैं?

2. **व्यावसायिक समायोजन –** यह संकेत करता है कि शिक्षकों का अपने व्यवसाय के प्रति दृष्टिकोण और समायोजनपूर्ण है?

3. **छात्रों से समायोजन** – यह संकेत करता है कि छात्रों के प्रति शिक्षक का व्यवहार सौहार्दपूर्ण है या नहीं।

4. **सामाजिक समायोजन –** शिक्षक उस स्थानीय समाज के प्रति कैसा समायोजन रखते हैं जिसके मध्य वे शिक्षणरत हैं। जिसकी सूचना इस आयाम से प्राप्त होती है।

5. **मनोदैहिक समायोजन –** क्या शिक्षण मनोदैहिक समस्याओं से युक्त है या ग्रसित है? इसकी सूचना इस आयाम से प्राप्त होती है।

6. **परिवेशीय समायोजन –** यह संकेत करता है कि शिक्षक पर उस परिवेश की जलवायु का कैसा प्रभाव पड़ा है जहाँ वह शिक्षणरत है अर्थात् स्थानीय परिवेश, जलवायु और वातावरण के प्रति शिक्षक का अनुकूलन कैसा है?

उपसंहार

इस संपूर्ण प्रपत्र का अध्ययन करने के पश्चात यह ज्ञात होता है, कि शिक्षा केवल एक छात्र का ही नहीं अपितु एक शिक्षक का भी अति महत्वपूर्ण भाग है। शिक्षा केवल एक छात्र का शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक विकास नहीं करती अपितु यह एक शिक्षक का भी शारीरिक, मानसिक, व चारित्रिक विकास करती है। इसके माध्यम से जीवन में फैले अंधियारे को बहुत ही सरल रूप से निकाला जा सकता है। क्योंकि यह मस्तिष्क में उन भावों का विकास करती है, जिसके माध्यम से सही एवं गलत की पहचान मनुष्य अपने जीवन में कर पाने में समर्थ होता है। यह प्रपत्र एक शिक्षक के समायोजन की स्थिति को दर्शाता है, कि किस प्रकार शिक्षा, शिक्षक के एक बेहतर समायोजन पर अपना प्रभाव छोड़ती है। उसका कुसमायोजन से बचाव करती है, जिससे वह छात्रों को भली प्रकार से शिक्षा प्रदान कर सके एवं समायोजन का भाग बना रहे।

सन्दर्भ

1. राय, पारसनाथ – अनुसंधान परिचय, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा 3
2. चौबे, एस0 पी0 – शिक्षा के दार्शनिक ऐतिहासिक और समाजशास्त्रीय आधार, लॉयल बुक डिपो, मेरठ
3. अ0 स0 अल्तेकर – प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति

4. चौबे सरयू प्रसाद – भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें, लाल बुक डिपो, मेरठ
5. बुच, एम0 वी0 – The Second Survey of Research in Education (1972-78)
6. बुच, एम0 वी0 – The Third Survey of Research in Education (1978-83)
7. मल्ल, कु0 उत्तरा – संस्थागत वातावरण एवं शिक्षक अभिवृत्ति का अध्ययन (1986–87)
8. सेमवाल, अरुण – पौड़ी जनपद के राजकीय एवं गैर राजकीय माध्यमिक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन (1995–96)